Shodh Prabha: A Multidisciplinary Journal
ISSN: 3108-2726 (Online), Volume-2, Issue-4, (July - August) 2026

स्वतंत्रता के बाद भारत में खादी उद्योग के संरक्षण एवं विकास की नीतियाँ (1947-2000)

ज़ेबा मुमताज़
सामाजिक विज्ञान संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी (उ०प्र०)

सारांश

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत सरकार ने खादी उद्योग को ग्रामीण रोजगार, आत्मनिर्भरता तथा कुटीर उद्योगों के विकास के प्रमुख साधन के रूप में अपनाया। महात्मा गांधी के स्वदेशी एवं ग्राम स्वराज के विचारों से प्रेरित होकर खादी को राष्ट्रीय विकास नीति में महत्वपूर्ण स्थान दिया गया। प्रस्तुत शोध-पत्र में स्वतंत्रता के बाद खादी उद्योग के संरक्षण एवं विकास के लिए अपनाई गई सरकारी नीतियों का ऐतिहासिक विश्लेषण किया गया है। इसमें पंचवर्षीय योजनाओं, खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग (KVIC) की स्थापना, वित्तीय सहायता, प्रशिक्षण, विपणन, तकनीकी उन्नयन तथा संस्थागत सुधारों की भूमिका का विवेचन किया गया है। साथ ही, 1991 के आर्थिक उदारीकरण के बाद खादी उद्योग के समक्ष उत्पन्न चुनौतियों तथा सरकारी नीतियों में आए परिवर्तनों का भी अध्ययन किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि सरकारी संरक्षण के कारण खादी उद्योग ने ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार सृजन, पारंपरिक कौशल के संरक्षण तथा स्थानीय अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया, यद्यपि बाजार प्रतिस्पर्धा, वित्तीय सीमाओं तथा तकनीकी चुनौतियों के कारण इसकी विकास गति प्रभावित हुई। यह अध्ययन खादी उद्योग की नीतिगत यात्रा तथा ग्रामीण विकास में उसकी भूमिका को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में समझने का प्रयास करता है।

मुख्य शब्द: खादी उद्योग, खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग, पंचवर्षीय योजनाएँ, सरकारी नीतियाँ, उदारीकरण।

खादी, जिसे खद्दर भी कहा जाता है, भारत में हाथ से काते गए सूत तथा हाथ से बुने गए सादे सूती वस्त्र को कहा जाता है। यद्यपि स्वतंत्रता-पूर्व काल में इसकी अवधारणा कुछ भिन्न थी, परंतु महात्मा गांधी ने स्वदेशी आंदोलन के दौरान खादी को केवल एक वस्त्र नहीं, बल्कि स्वदेशी, आत्मनिर्भरता और राष्ट्रीय चेतना के प्रतीक के रूप में स्थापित किया। उनका प्रसिद्ध कथन था कि "भारत की स्वतंत्रता केवल सूत के एक धागे पर टिकी हुई थी।" वर्तमान वैश्वीकरण, निजीकरण और उदारीकरण के दौर में खादी का अर्थ उस वस्त्र से है, जो हाथ से काते गए सूत को हाथ से बुनकर तैयार किया जाता है। इसी प्रकार हाथ से काते और हाथ से बुने गए रेशम, जूट तथा ऊन से निर्मित वस्त्रों को क्रमशः रेशमी खादी, जूट खादी और ऊनी खादी कहा जाता है।[1] खादी भारतीय इतिहास में केवल एक वस्त्र नहीं, बल्कि सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक चेतना का महत्वपूर्ण प्रतीक रही है। औपनिवेशिक शासन के दौरान यह स्वदेशी आंदोलन और राष्ट्रीय एकता का प्रभावी माध्यम बनी, जबकि स्वतंत्रता के बाद इसे ग्रामीण विकास, रोजगार सृजन तथा आत्मनिर्भरता की नीति से जोड़ा गया। ग्रामीण भारत में विशेष रूप से महिलाओं और कुटीर उद्योगों से जुड़े श्रमिकों के लिए खादी आजीविका का महत्वपूर्ण स्रोत रही है। तथापि, उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण के दौर में बाजार प्रतिस्पर्धा, बदलती उपभोक्ता मांग तथा मशीन निर्मित वस्त्रों के बढ़ते प्रभाव ने खादी उद्योग के समक्ष अनेक चुनौतियाँ उत्पन्न की हैं, जिससे इसकी ग्रामीण विकास में भूमिका प्रभावित हुई है।[2]

पंडित जवाहरलाल नेहरू ने खादी को "स्वतंत्रता का वस्त्र", बर्नार्ड एस. कोहन ने "विद्रोह की वर्दी" तथा सुसान बीन ने "स्वतंत्रता का कपड़ा" कहा है। ये अभिव्यक्तियाँ इस तथ्य को रेखांकित करती हैं कि खादी केवल वस्त्र उत्पादन का माध्यम नहीं थी, बल्कि भारतीय राष्ट्रीय चेतना और औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध प्रतिरोध का सशक्त प्रतीक भी थी।

महात्मा गांधी ने चरखे और खादी को भारतीय आर्थिक पुनरुत्थान, स्वदेशी तथा ग्राम स्वावलंबन के आधार के रूप में स्थापित किया। उनके लिए खादी विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार का साधन मात्र नहीं थी, बल्कि आर्थिक आत्मनिर्भरता और सामाजिक पुनर्निर्माण का माध्यम भी थी। किंतु वर्तमान नवउदारवादी आर्थिक व्यवस्था में खादी जिस वैचारिक आधार पर विकसित हुई थी, वह तीव्र बाजार प्रतिस्पर्धा और औद्योगिक उत्पादन के दबाव के कारण नई चुनौतियों का सामना कर रही है।[3]

औपनिवेशिक काल में खादी भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन का एक महत्वपूर्ण आर्थिक और राजनीतिक उपकरण बनकर उभरी। 1919 में विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार के आंदोलन के दौरान महात्मा गांधी ने भारतीयों से खादी अपनाने का आह्वान किया। इसके पश्चात् 1920 के नागपुर अधिवेशन में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने खादी के प्रचार-प्रसार को अपने कार्यक्रम का महत्वपूर्ण हिस्सा बनाया। 1920 का दशक खादी के लिए विशेष महत्व रखता है, क्योंकि इसे कांग्रेस के रचनात्मक कार्यक्रम और असहयोग आंदोलन के तीन प्रमुख उद्देश्यों में सम्मिलित किया गया था। इसके अन्य दो उद्देश्य अस्पृश्यता उन्मूलन और हिंदू-मुस्लिम एकता की स्थापना थे। गांधीजी के लिए खादी केवल वस्त्र नहीं, बल्कि स्वराज प्राप्ति का एक साधन थी। उनका विश्वास था कि खादी भारतीयों में आत्मनिर्भरता, अनुशासन और स्वतंत्रता की भावना को मजबूत करेगी तथा यह विदेशी कपड़ों के बहिष्कार का प्रभावी राजनीतिक हथियार बन सकती है।[4] हालाँकि गांधीजी ने खादी को केवल राजनीतिक प्रतीक के रूप में नहीं देखा, बल्कि इसके आर्थिक महत्व पर भी विशेष बल दिया। उनके अनुसार खादी ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार उपलब्ध कराने का माध्यम थी, जो विशेष रूप से बेरोजगार कतिनों और बुनकरों के लिए आजीविका का साधन बन सकती थी। इस प्रकार खादी आंदोलन का उद्देश्य ग्रामीण अर्थव्यवस्था को पुनर्जीवित करना और स्वदेशी उत्पादन को बढ़ावा देना था। दिसंबर 1923 में अखिल भारतीय खादी बोर्ड की स्थापना की गई, जो प्रारंभ में कांग्रेस संगठन का ही एक अंग था और उसके निर्देशन में कार्य करता था। इसके बाद 1925 में अखिल भारतीय चरखा संघ की स्थापना हुई। यद्यपि यह कांग्रेस से संबद्ध था, किंतु इसकी कार्यप्रणाली स्वतंत्र थी। 1935 तक इस संस्था ने खादी के उत्पादन, प्रचार और बिक्री के विस्तार पर विशेष ध्यान दिया। इसका उद्देश्य था कि खादी केवल एक अस्थायी आंदोलन न रहकर व्यापक ग्राम पुनर्निर्माण और अहिंसात्मक ग्रामीण विकास कार्यक्रम का स्थायी हिस्सा बने।[5]

स्वतंत्रता के बाद खादी को राष्ट्र निर्माण और ग्रामीण आर्थिक विकास की योजना से जोड़ा गया। योजना आयोग की अनुशंसा तथा खादी कार्यकर्ताओं के परामर्श से 1953 में एक स्वायत्त संस्था अखिल भारतीय खादी एवं ग्रामोद्योग बोर्ड की स्थापना की गई। इसके साथ ही खादी स्वतंत्रता आंदोलन के प्रतीक से आगे बढ़कर आर्थिक विकास की योजना का हिस्सा बन गई। बोर्ड की स्थापना के समय खादी उत्पादन का मूल्य लगभग 1.5 करोड़ था, जो आगे बढ़कर 22.23 करोड़ तक पहुँच गया। इसके अतिरिक्त देश के लगभग एक लाख गाँवों में कताई केंद्र और एक हजार गाँवों में बुनाई केंद्र स्थापित किए गए। इस अवधि में प्रशिक्षण, उन्नत उपकरणों के प्रयोग, अनुसंधान कार्य तथा सरकार द्वारा दी जाने वाली छूट जैसी योजनाओं के माध्यम से खादी संस्थाओं को प्रोत्साहन मिला।[6] किंतु शीघ्र ही यह अनुभव किया गया कि खादी एवं ग्रामोद्योगों के प्रभावी नियोजन, प्रचार तथा समन्वित विकास के लिए एक अधिक शक्तिशाली और वैधानिक संस्था की आवश्यकता है।

परिणामस्वरूप संसद ने खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग अधिनियम, 1956 (अधिनियम संख्या 61, 1956) पारित किया, जिसके अंतर्गत 1957 में खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग की स्थापना की गई। इसका उद्देश्य देश में खादी एवं ग्रामोद्योगों के नियोजित विकास, संरक्षण तथा प्रोत्साहन के लिए एक संगठित संस्थागत व्यवस्था स्थापित करना था।[7] आयोग को खादी एवं ग्रामोद्योगों के नियोजन, प्रचार, संगठन और विकास की जिम्मेदारी सौंपी गई। साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों में

स्वरोजगार के अवसरों का सृजन, स्थानीय संसाधनों के उपयोग पर आधारित उत्पादन को प्रोत्साहित करना, कारीगरों एवं ग्रामीण उद्यमियों को वित्तीय, तकनीकी तथा प्रशिक्षण संबंधी सहायता प्रदान करना तथा हस्तशिल्प, हथकरघा एवं अन्य कुटीर उद्योगों के विकास को बढ़ावा देना इसके प्रमुख कार्यों में सम्मिलित थे। इसके अतिरिक्त आयोग ने महिलाओं, अनुसूचित जाति–जनजाति तथा आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों की आजीविका सुदृढ़ करने और उनकी आर्थिक भागीदारी बढ़ाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस प्रकार, स्वतंत्रता के बाद खादी उद्योग के संरक्षण एवं विकास की सरकारी नीतियों के क्रियान्वयन में खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग एक केंद्रीय संस्थागत आधार के रूप में स्थापित हुआ।[8]

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् खादी एवं ग्रामोद्योग के संरक्षण तथा विकास को पंचवर्षीय योजनाओं में विशेष स्थान दिया गया। महात्मा गांधी के इस विचार कि "भारत का उद्धार खादी एवं ग्रामोद्योगों में निहित है", को ध्यान में रखते हुए सरकार ने इनके विकास हेतु वित्तीय सहायता का प्रावधान किया। खादी एवं ग्रामोद्योग के विकास की दिशा में 1948 की औद्योगिक नीति एक महत्वपूर्ण कदम थी, जिसमें मिश्रित अर्थव्यवस्था के अंतर्गत संयुक्त उत्पादन प्रणाली को स्वीकार करते हुए लघु, कुटीर तथा खादी ग्रामोद्योगों की भूमिका को मान्यता प्रदान की गई।[9] इस नीति में यह स्पष्ट किया गया कि ग्राम एवं लघु उद्योग स्थानीय संसाधनों के उपयोग द्वारा भोजन, वस्त्र तथा कृषि उपकरण जैसी दैनिक उपभोग की वस्तुओं के उत्पादन में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने में महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं। प्रथम पंचवर्षीय योजना में खादी एवं ग्रामोद्योगों के विकास के लिए 15 करोड़ व्यय करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया, जो कुल योजना व्यय का 0.1 प्रतिशत था, किन्तु वास्तविक व्यय 11.8 करोड़ ही हो सका। वर्ष 1953–54 में खादी एवं ग्रामोद्योग की स्थिति का आकलन इसी पृष्ठभूमि में किया गया।[10] द्वितीय पंचवर्षीय योजना के संदर्भ में जून 1954 में योजना आयोग द्वारा कार्वे समिति का गठन किया गया, जिसके सुझावों को 30 अप्रैल 1956 को घोषित नई औद्योगिक नीति तथा द्वितीय पंचवर्षीय योजना में सम्मिलित किया गया। इस योजना में खादी एवं ग्रामोद्योग के विकास हेतु 83.78 करोड़ के व्यय का प्रस्ताव रखा गया, जो कुल योजना परिव्यय का 1.8 प्रतिशत था। इसके अंतर्गत खादी क्षेत्र में 13.48 लाख तथा ग्रामोद्योगों में 6.11 लाख व्यक्तियों को रोजगार उपलब्ध कराने का लक्ष्य रखा गया। प्रस्तावित व्यय में खादी के लिए 16.7 करोड़ तथा अन्य ग्रामोद्योगों के लिए 38.08 करोड़ निर्धारित किए गए। इसी योजना काल में खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग (KVIC) की स्थापना भी की गई।[11]

तृतीय पंचवर्षीय योजना (1961–66) में खादी एवं ग्रामोद्योगों के विकास के लिए 92.40 करोड़ के व्यय का प्रावधान किया गया, किन्तु वास्तविक व्यय 86.90 करोड़ रहा। इस योजना में खादी के लिए 37.00 करोड़, परंपरागत अम्बर कार्यक्रम के लिए 32.00 करोड़ तथा ग्रामोद्योगों के लिए 20.00 करोड़ निर्धारित किए गए। तृतीय पंचवर्षीय योजना के बाद 1966–69 के दौरान तीन वार्षिक योजनाएँ लागू की गईं। वर्ष 1966–67 में खादी एवं ग्रामोद्योग के लिए 18.17 करोड़ का लक्ष्य निर्धारित किया गया, जबकि वास्तविक व्यय 18.72 करोड़ रहा। वर्ष 1967–68 में 17.74 करोड़ के लक्ष्य के मुकाबले लगभग 20.03 करोड़ का व्यय हुआ।[12] वर्ष 1968–69 में 16.86 करोड़ का लक्ष्य निर्धारित किया गया। इन तीनों वार्षिक योजनाओं के दौरान खादी क्षेत्र में 15.10 लाख तथा ग्रामोद्योगों में 7.49 लाख व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त हुआ।[13] चतुर्थ पंचवर्षीय योजना (1969–74) में कृषि-आधारित उद्योगों के विकास, कच्चे माल की उपलब्धता, विकेंद्रीकरण तथा उत्पादन के विस्तार पर विशेष बल दिया गया। इस योजना में खादी एवं ग्रामोद्योग के विकास हेतु कुल 151.91 करोड़ का प्रावधान किया गया, जिसमें बिजली चालित हथकरघा उद्योग के लिए 27.08 करोड़, हथकरघा के लिए 7.77 करोड़ तथा खादी एवं ग्रामोद्योग के लिए 112.56 करोड़ निर्धारित किए गए। योजना अवधि में खादी एवं ग्रामोद्योग तथा बिजली चालित करघों पर 32.47 करोड़ व्यय किए गए। इसी दौरान अशोक

मेहता समिति ने विकेंद्रीकृत व्यवस्था के माध्यम से खादी एवं ग्रामोद्योगों के विकास के संबंध में अनेक महत्वपूर्ण सुझाव प्रस्तुत किए। समिति के लगभग 50 सुझावों में उत्पादन, निर्यात और रोजगार वृद्धि पर विशेष बल दिया गया तथा सात वर्षीय योजना बनाकर आत्मनिर्भर उत्पादन प्रणाली विकसित करने की अनुशंसा की गई।[14]

पंचम पंचवर्षीय योजना (1974–78) में खादी एवं ग्रामोद्योगों के विकास को विशेष प्राथमिकता प्रदान की गई। सार्वजनिक क्षेत्र में लघु एवं ग्रामोद्योगों के लिए 611 करोड़ का प्रावधान किया गया। इसमें हथकरघा उद्योग हेतु 99.92 करोड़, शक्ति करघा हेतु 3.25 करोड़ तथा खादी एवं ग्रामोद्योग हेतु 142.98 करोड़ का लक्ष्य निर्धारित किया गया, जबकि वास्तविक व्यय क्रमशः 80.63 करोड़, 1.53 करोड़ तथा 126.38 करोड़ रहा।[15] इसके पश्चात् 1978–80 के दौरान वार्षिक योजनाएँ लागू रहीं। इस अवधि में 768.90 लाख वर्ग मीटर खादी का उत्पादन हुआ तथा 10.77 लाख व्यक्तियों को रोजगार मिला। ग्रामोद्योगों के माध्यम से 15.55 लाख व्यक्तियों के लिए रोजगार की व्यवस्था की गई। योजना के पूंजी निवेश का 40 प्रतिशत ग्रामीण विकास के लिए निर्धारित किया गया, जिसमें हथकरघा उद्योग के लिए 28.00 करोड़, शक्ति करघा के लिए 6.00 करोड़ तथा खादी एवं ग्रामोद्योग के लिए 390.00 करोड़ का प्रावधान किया गया।[16] आम चुनावों के उपरांत श्रीमती इंदिरा गांधी के नेतृत्व में छठी पंचवर्षीय योजना (1980–85) को नए स्वरूप में लागू किया गया। इस योजना में हथकरघा तथा खादी एवं ग्रामोद्योग गतिविधियों को ग्रामीण विकास के महत्वपूर्ण साधन के रूप में प्राथमिकता दी गई। योजना में कुल 890 करोड़ के व्यय का प्रावधान किया गया, जो कुल योजना परिव्यय का 0.9 प्रतिशत था। इसमें खादी एवं ग्रामोद्योग के लिए 412 करोड़ तथा हाथ एवं शक्ति करघा क्षेत्र के लिए 478 करोड़ निर्धारित किए गए।[17]

सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985–90) के दौरान खादी की बिक्री का मूल्य 234.92 करोड़ तथा ग्रामोद्योग का मूल्य 1420.54 करोड़ रहा। इस अवधि में वृद्धि दर 9.51 प्रतिशत दर्ज की गई। योजना के अंतर्गत खादी क्षेत्र में 13.93 लाख तथा ग्रामोद्योगों में 28.21 लाख ग्रामीण व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त हुआ। योजना समाप्त होने के बाद राजनीतिक परिस्थितियों के कारण 1990–92 के लिए वार्षिक योजनाएँ लागू की गईं। इन योजनाओं में खादी हेतु 307.29 करोड़ तथा ग्रामोद्योग हेतु 2192.66 करोड़ का प्रावधान किया गया, जिसके परिणामस्वरूप क्रमशः 14.72 लाख तथा 35.08 लाख व्यक्तियों को रोजगार उपलब्ध कराया गया।[18] आठवीं पंचवर्षीय योजना (1992–97) में खादी एवं ग्रामोद्योग को ग्रामीण तथा राष्ट्रीय विकास के महत्वपूर्ण आधार के रूप में स्वीकार किया गया। योजना के दौरान खादी, निर्यात, तकनीकी उन्नयन, उत्पादन उपकरणों तथा प्रशिक्षण पर विशेष ध्यान दिया गया। खादी के लिए 449.82 करोड़ तथा ग्रामोद्योगों के लिए 3205.69 करोड़ का प्रावधान किया गया, जिसके अंतर्गत क्रमशः 14.05 लाख तथा 40.85 लाख व्यक्तियों को रोजगार उपलब्ध हुआ। इस अवधि में 1022.24 लाख वर्ग मीटर खादी का उत्पादन दर्ज किया गया। वर्ष 1997 में के.वी.आई.सी. का उत्पादन 4519 करोड़ से अधिक रहा तथा 56.50 लाख व्यक्तियों को रोजगार उपलब्ध कराया गया। आठवीं पंचवर्षीय योजना में खादी के लिए 490.0 करोड़ तथा ग्रामोद्योगों के लिए 3300 करोड़ का लक्ष्य निर्धारित किया गया था, जबकि वास्तविक व्यय क्रमशः 522.23 करोड़ तथा 3504.22 करोड़ रहा।[19]

नवम पंचवर्षीय योजना (1997–2002) में ग्रामीण एवं लघु उद्योगों के विकास को विशेष महत्व दिया गया। योजना के पैरा 6(बी) के अंतर्गत खादी एवं ग्रामोद्योग, हथकरघा, पावरलूम, हस्तशिल्प, ऊनी उद्योग, रेशम कीटपालन तथा खाद्य उद्योगों को सुदृढ़ बनाकर रोजगार के अवसरों में वृद्धि करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया। योजना में खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग (के.वी.आई.सी.) को वित्तीय रूप से अधिक सक्षम बनाने पर बल दिया गया, जिससे खादी एवं ग्रामोद्योग क्षेत्र में लगभग 20 लाख रोजगार के अवसर सृजित किए जाने का उद्देश्य रखा गया। साथ ही लघु उद्योग, हथकरघा, पावरलूम, कॉयर, हस्तशिल्प, ऊनी उद्योग तथा अन्य ग्रामीण उद्योगों के तकनीकी विकास पर विशेष ध्यान

देने तथा खादी एवं ग्रामोद्योग के लिए 1000 करोड़ की ऋण सुविधा उपलब्ध कराने का प्रावधान किया गया। यद्यपि नवम पंचवर्षीय योजना अपने प्रारंभ से ही राजनीतिक अस्थिरता से प्रभावित रही, फिर भी वर्ष 1997–98 के प्रथम वर्ष में लघु एवं ग्रामोद्योगों के विभिन्न मदों के लिए क्रमशः 246.65 करोड़, 6377.42 करोड़, 722.98 करोड़ तथा 25.01 करोड़ का प्रावधान किया गया। इसी अवधि में ग्राम एवं लघु उद्योगों के अंतर्गत औद्योगिक सम्पदाएँ, लघु उद्योग, खादी, हस्तशिल्प, नारियल रेशा, रेशम कीटपालन, बिजली करघा तथा अन्य ग्रामोद्योगों से प्राप्ति वर्ष 1996–97 में 180.32 करोड़ तथा 1997–98 में 73.61 करोड़ रही। वर्ष 1997–98 के लिए ग्राम एवं लघु उद्योगों हेतु कुल 700.88 करोड़ के अनुदान की मांग प्रस्तुत की गई। इसी वर्ष खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग के अंतर्गत खादी उद्योग के लिए 60.30 करोड़ तथा अन्य ग्रामोद्योगों के लिए 95.70 करोड़, अर्थात कुल 156.00 करोड़ का प्रावधान किया गया।

नवम पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत वर्ष 1999–2000 के लिए खादी हेतु 143.10 करोड़ तथा अन्य ग्रामोद्योगों के लिए 55.70 करोड़ का आवंटन निर्धारित किया गया। इसी प्रकार वर्ष 2000–2001 में क्रमशः 154.10 करोड़ तथा 60.00 करोड़ के व्यय का प्रावधान किया गया। इस प्रकार वर्ष 1999–2000 के लिए कुल 198.80 करोड़ तथा वर्ष 2000–2001 के लिए 214.10 करोड़ का प्रावधान किया गया। साथ ही खादी के लिए क्रमशः वर्ष 1999–2000 में 54.30 करोड़ तथा वर्ष 2000–2001 में 52.36 करोड़ की बजटीय सहायता का भी प्रावधान किया गया।[20]

स्वतंत्रता के बाद प्रारंभिक पंचवर्षीय योजनाओं में तीव्र औद्योगीकरण पर अधिक बल दिया गया, जिसके कारण ग्रामीण रोजगार और ग्रामोद्योगों को अपेक्षित महत्व नहीं मिल सका। बाद में कृषि एवं ग्रामोद्योगों के महत्व को स्वीकार करते हुए खादी एवं ग्रामोद्योगों पर व्यय बढ़ाया गया। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में इस क्षेत्र पर 85.4 करोड़ रुपये तथा तृतीय पंचवर्षीय योजना में 92.4 करोड़ रुपये व्यय किए गए। खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग (KVIC) के प्रयासों से खादी उत्पादन 1952–53 के 1.94 करोड़ रुपये से बढ़कर 1959–60 में 14.14 करोड़ रुपये हो गया। उत्पादन एवं उत्पादकता बढ़ाने के लिए अम्बर चरखा योजना को प्रोत्साहित किया गया, जिसके अंतर्गत 1963–64 में 5.75 करोड़ रुपये तथा 1964–65 में 5.27 करोड़ रुपये मूल्य का उत्पादन हुआ। इसके लिए विभिन्न राज्यों में 79 प्रशिक्षण विद्यालय संचालित थे। खादी गतिविधियों से जुड़े व्यक्तियों की संख्या भी 1963–64 के 16.25 लाख से बढ़कर 1964–65 में 16.80 लाख हो गई। 1970 के दशक में खादी क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण उत्पादगत परिवर्तन के रूप में पॉली खादी सामने आई। इसमें सामान्यतः 60–70 प्रतिशत पॉलिएस्टर तथा 30–40 प्रतिशत सूती धागे का मिश्रण होता था और इसका निर्माण हथकरघे पर किया जाता था। अधिक मजबूती, टिकाऊपन, कम रख-रखाव और अपेक्षाकृत कम लागत के कारण इसकी लोकप्रियता बढ़ी, यद्यपि अधिक तापमान पर रंग खराब होने तथा कृत्रिम रेशे के उपयोग से जुड़ी पर्यावरणीय चिंताएँ इसकी सीमाएँ थीं। इस प्रकार पॉली खादी खादी क्षेत्र में उत्पाद विविधीकरण और तकनीकी अनुकूलन का महत्वपूर्ण उदाहरण बनी।[21]

खादी के मूल स्वरूप में कताई और बुनाई की पारंपरिक तकनीकों में अपेक्षाकृत कम परिवर्तन हुए, क्योंकि खादी की पहचान हाथ से काते गए सूत और हाथ से बुने गए वस्त्र से जुड़ी रही। तथापि, रंगाई, छपाई तथा फिनिशिंग की नई तकनीकों के उपयोग से खादी वस्त्रों के डिज़ाइन, रंग और गुणवत्ता में निरंतर सुधार किया गया। इन तकनीकी परिवर्तनों का उद्देश्य बदलती उपभोक्ता मांग के अनुरूप खादी को अधिक आकर्षक और प्रतिस्पर्धी बनाना था।[22] स्वतंत्रता के बाद लगभग दो दशकों तक खादी मुख्यतः राजनीतिक नेतृत्व और सार्वजनिक जीवन से जुड़े व्यक्तियों की पहचान मानी जाती रही। किंतु 1990 के दशक में इसके स्वरूप में उल्लेखनीय परिवर्तन आया और यह युवा वर्ग के बीच भी लोकप्रिय होने लगी। इस अवधि में खादी को केवल पारंपरिक वस्त्र के रूप में नहीं, बल्कि आधुनिक जीवनशैली के अनुरूप एक फैशन उत्पाद के रूप में प्रस्तुत किया गया। परिणामस्वरूप रेशमी खादी की साड़ियाँ, सूती खादी के

परिधान, कुर्ता, पायजामा, शर्ट, जैकेट, कोट तथा सूट जैसे अनेक उत्पाद विकसित किए गए, जिन्हें औपचारिक और अनौपचारिक दोनों अवसरों पर पहनने योग्य बनाया गया। इस प्रकार खादी उत्पादन में उत्पाद विविधीकरण और डिज़ाइन नवाचार को बढ़ावा मिला।

1990 के दशक में फैशन उद्योग ने भी खादी की बढ़ती संभावनाओं को पहचाना। उपभोक्ताओं, विशेषकर युवाओं की बदलती रुचि को ध्यान में रखते हुए खादी में नए रंगों, बनावटों और डिज़ाइनों का समावेश किया गया। 1987 में पल्लवी जयकिशन ने मुंबई में अपना पहला खादी डिज़ाइनर संग्रह प्रस्तुत किया, जिसने खादी को आधुनिक फैशन जगत में नई पहचान दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसके पश्चात् उन्होंने हाथ की कढ़ाई, मोती तथा अन्य सजावटी तत्वों का प्रयोग कर खादी वस्त्रों को अधिक आकर्षक बनाया। इसी प्रकार कोमल वांकर और शीला देवी जैसे डिज़ाइनरों ने दिल्ली में खादी डिज़ाइन प्रदर्शनियों के माध्यम से इसके प्रचार-प्रसार में योगदान दिया। आगे चलकर सब्यसाची मुखर्जी, रितु कुमार, अनाविला, राजेश प्रताप सिंह, अब्राहम एंड ठाकोर तथा प्रियंशी जोरिवाला जैसे प्रमुख फैशन डिज़ाइनरों ने भी पारंपरिक और आधुनिक दोनों प्रकार के खादी परिधानों का विकास किया। इससे खादी का बाजार केवल पारंपरिक उपभोक्ताओं तक सीमित न रहकर शहरी एवं युवा वर्ग तक विस्तृत हुआ।[23] इस प्रकार 1970 से 2000 के बीच खादी क्षेत्र में तकनीकी परिवर्तन मुख्यतः मिश्रित रेशों (पॉली खादी), रंगाई एवं परिष्करण तकनीकों, डिज़ाइन नवाचार, उत्पाद विविधीकरण तथा फैशन उद्योग से जुड़ाव के रूप में दिखाई देते हैं। इन परिवर्तनों ने खादी की बाजार-स्वीकार्यता को बढ़ाया तथा बदलती उपभोक्ता आवश्यकताओं के अनुरूप इसे अधिक प्रतिस्पर्धी बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

स्वतंत्रता के बाद भारत में खादी उद्योग को ग्रामीण रोजगार, आत्मनिर्भरता और विकेंद्रीकृत अर्थव्यवस्था के महत्वपूर्ण साधन के रूप में विकसित करने का प्रयास किया गया। पंचवर्षीय योजनाओं, वित्तीय सहायता तथा खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग की स्थापना ने इसके विकास के लिए संस्थागत आधार प्रदान किया। इसके परिणामस्वरूप उत्पादन, रोजगार और प्रशिक्षण के क्षेत्र में विस्तार हुआ, किंतु सरकारी संरक्षण के बावजूद खादी उद्योग वित्तीय निर्भरता, सीमित बाजार, तकनीकी सीमाओं और मशीन निर्मित वस्त्रों की प्रतिस्पर्धा जैसी समस्याओं से पूरी तरह मुक्त नहीं हो सका। 1970 के दशक से उत्पाद विविधीकरण तथा बाद में डिजाइन, रंगाई और फैशन उद्योग से जुड़ाव के माध्यम से खादी को आधुनिक बाजार के अनुरूप बनाने का प्रयास किया गया। फिर भी, खादी के समक्ष अपनी पारंपरिक पहचान और बाजार की प्रतिस्पर्धात्मक आवश्यकताओं के बीच संतुलन बनाए रखने की चुनौती बनी रही। अतः 1947 से 2000 तक खादी उद्योग की नीतिगत यात्रा को केवल सफलता के रूप में नहीं देखा जा सकता। सरकारी नीतियों ने इसके अस्तित्व और विकास को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, लेकिन इसके दीर्घकालिक विकास के लिए केवल संरक्षण नहीं, बल्कि गुणवत्ता, उत्पादकता, विपणन और कारीगरों की आर्थिक स्थिति में सुधार भी आवश्यक था।

संदर्भ सूची

1. पाइन, ए. एस. (2017)। एन एक्सप्लोरेटरी स्टडी ऑन खादी इंडस्ट्री ऑफ इंडिया। *एसएसआरएन इलेक्ट्रॉनिक जर्नल*। https://doi.org/10.2139/ssrn.2947509

2. अरविंद, वृंदा एवं गिरिशंकर, एस. बी. (2022)। "खादी टेक्सटाइल्स, वीमेन एंड रूरल डेवलपमेंट: एन एनालिसिस फ्रॉम पास्ट टू प्रेज़ेंट।" *क्लॉथ एंड कल्चर*, 22(1), 2–19। ऑनलाइन प्रकाशित 8 फरवरी 2022, पृ. 4।

3. राहुल रामगुंडम, *गांधीज खादी: ए हिस्ट्री ऑफ कंटेंशन एंड कॉन्सिलिएशन* (नई दिल्ली: ओरिएंट ब्लैकस्वान, 2009)।

4. वही, पृ. 5।

5. वही, पृ. 6।

6. गवर्नमेंट ऑफ इंडिया। (1953)। *रिपोर्ट ऑफ द खादी एंड विलेज इंडस्ट्रीज बोर्ड*। नई दिल्ली।

7. गवर्नमेंट ऑफ इंडिया। (1956)। *द खादी एंड विलेज इंडस्ट्रीज कमीशन एक्ट, 1956* (एक्ट नं. 61 ऑफ 1956), सेक्शंस 15–16।

8. खादी एंड विलेज इंडस्ट्रीज कमीशन। (2015)। *एनुअल रिपोर्ट 2014–15*। मुंबई: केवीआईसी। पृ. 79–82।

9. प्लानिंग कमीशन, गवर्नमेंट ऑफ इंडिया। (1948)। *रिपोर्ट ऑफ द विलेज एंड स्मॉल स्केल इंडस्ट्रीज*। नई दिल्ली। पृ. 318।

10. माहेश्वरी, राजेश कुमार। (1982, मई)। योजना काल में खादी ग्रामोद्योग। *खादी ग्रामोद्योग पत्रिका*, अंक 8, बम्बई: खादी और ग्रामोद्योग आयोग, इर्ला रोड, पृ. 403।

11. योजना आयोग, भारत सरकार। (1956)। *द्वितीय पंचवर्षीय योजना*। नई दिल्ली। पृ. 441।

12. योजना आयोग, भारत सरकार। (1968)। *वार्षिक योजना, 1967–68 एवं 1968–69*। नई दिल्ली। पृ. 52।

13. योजना आयोग, भारत सरकार। (1961)। *तृतीय पंचवर्षीय योजना*। नई दिल्ली। पृ. 164।

14. योजना आयोग, भारत सरकार। (1969)। *चतुर्थ पंचवर्षीय योजना*। नई दिल्ली। पृ. 176।

15. योजना आयोग, भारत सरकार। (1974)। *पंचम पंचवर्षीय योजना (प्रारूप रिपोर्ट)*। नई दिल्ली। पृ. 129।

16. प्लानिंग कमीशन, गवर्नमेंट ऑफ इंडिया। (1978)। *ड्राफ्ट फाइव ईयर प्लान*। पृ. 179।

17. विकास आयुक्त, लघु उद्योग विकास संगठन, भारत सरकार। (1980, 19 मार्च)। *प्रतिवेदन*। नई दिल्ली: विकास आयुक्त, लघु उद्योग विकास संगठन, भारत सरकार। पृ. 20–23।

18. खादी एंड विलेज इंडस्ट्रीज कमीशन। (1999, अक्टूबर)। सिलेक्ट इंडिकेटर्स ऑफ प्रोग्रेस इन वेरियस प्लान्स। इन *केवीआईसी एंड द न्यू मिलेनियम*, वॉल्यूम 46, नं. 1। सोर्स्ड फ्रॉम *स्टैटिस्टिकल एब्स्ट्रैक्ट*। बॉम्बे: खादी एंड विलेज इंडस्ट्रीज कमीशन। पृ. 17।

19. खादी और ग्रामोद्योग आयोग। (1996, दिसंबर)। आठवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान लक्ष्यांक एवं उपलब्धि। *वार्षिक प्रतिवेदन*, अध्याय 2। बम्बई: खादी और ग्रामोद्योग आयोग। पृ. 10।

20. प्लानिंग कमीशन, गवर्नमेंट ऑफ इंडिया। (2000)। *एप्रोच पेपर टू द नाइन्थ फाइव ईयर प्लान (1997–2002)*। नई दिल्ली। पृ. 69–70।

21. डॉ. शर्मा, वीरेन्द्र। (1984)। *भारत के पुनर्निर्माण में गाँधीजी का योगदान*। नई दिल्ली: श्री पब्लिशिंग हाउस। पृ. 198।

22. आल्हा, शालिनी। (2025, मार्च)। भारत में खादी का इतिहास एवं विकास। *एंथोलॉजी: द रिसर्च, 9*(12), 3।

23. वही, पृ. 4।